डाक पंजीयन संख्या : बीकानेर/068/2021-23
REG. NO. RAJHIN/2002/14707

उत्तमा वृत्तिस्तु कृषिकर्मैव

चोखी खेती

फरवरी 2022 ई-संस्करण

जैविक खेती में कृषि विश्वविद्यालय की भूमिका

प्रो. (डॉ.) रक्षपाल सिंह
कुलपति, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

प्राचीन काल में मानव स्वास्थ्य के अनुकूल तथा प्राकृतिक वातावरण के अनुरूप खेती की जाती थी, जिसमें जैविक और अजैविक पदार्थों के बीच आदान–प्रदान का चक्र निरन्तर चलता रहा था, जिसके फलस्वरूप जल, भूमि, वायु तथा वातावरण प्रदूषित नहीं होता था। भारत वर्ष में प्राचीन काल से ही कृषि व गौ–पालन, साथ–साथ किया जाता है। श्रीकृष्ण और बलराम को क्रमशः गोपाल एवं हलधर के नाम से संबोधित करना ही कृषि और गौपालन को एक दूसरे का पूरक होना दर्शाता हैं। कृषि एंव गौ–पालन एक लाभदायक और प्राकृतिक वातावरण के अनुकूल एक आजीविका का साधन थी और उस समय के उन्नत समाज व प्रदेश की मजबूत अर्थव्यवस्था का आधार हुआ करती थी। परन्तु समय के साथ साथ गौ–पालन की तरफ रुझान कम होता जा रहा है। जिसका सीधा कुप्रभाव कृषि में विभिन्न रासायनिक खादों व कीटनाशकों के बढ़ते प्रयोग के रूप में देखा जा सकता है। कृषि एंव गौ–पालन के माध्यम से संतुलित कृषि परिस्थितिकी तंत्र अब गड़बड़ाने लगा है जिसके फलस्वरूप जैविक और अजैविक पदार्थों के चक्र का संतुलन बिगड़ता जा रहा है, और वातावरण प्रदूषित होकर, मानव जाति के स्वास्थ्य को दुष्प्रभावित कर रहा है। रासायनिक खाद, विषैले कीटनाशकों के स्थान पर जैविक खाद द्वारा ना केवल अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं बल्कि भूमि, जल एवं वातावरण भी प्रदूषित नहीं होगा।

जैविक खेती न अपनाए जाने के कई कारण हैं जैसे कि भारत सहित अन्य देशों के किसानों के अनुभवों के अनुसार रासायनिक, खेती को छोड़कर जैविक खेती अपनाने वाले किसानों को पहले तीन साल तक आर्थिक रूप से लाभ नहीं होता है, चौथे साल ब्रेक–ईवन बिन्दु आता है तथा पांचवें साल से लाभ मिलना प्रारम्भ होता है। सामान्यता बहुत से किसान पहले साल ही घाटा झेलने के बाद पुनः रासायनिक खेती प्रारम्भ कर देते हैं। भारत में 70 प्रतिशत छोटी जोत वाले सीमित साधन वाले किसान हैं। इन किसानों के पास अब पशुओं की संख्या भी तेजी से कम होती जा रही है। जैविक खेती के लिए उन्हें जैविक खाद खरीदना होना होता है। वैसे तो भारत में जो जैविक खाद निर्माता हैं, वो विश्व के जैविक खाद निर्माताओं के एक तिहाई हैं। किन्तु भारत के 99 प्रतिशत खाद उत्पादक असंगठित लघु क्षेत्र के हैं तथा इनमें से अधिकांश बिना प्रमाणीकरण करवाए जैविक खाद की आपूर्ति करते हैं। जैविक खेती अपनाने वाले किसानों की प्रायः यह शिकायत रहती है कि उन्हें जैविक खाद से दावा की हुई उपज की आधा उपज भी प्राप्त नहीं होती तथा भारी घाटा सहना पड़ता है। रासायनिक खेती छोड़कर बाजार से जैविक खाद खरीदकर जैविक खेती अपनाने वाले इन छोटे किसानों के कटु अनुभव को देखकर आसपास के अन्य किसान भी जैविक खेती करने का इरादा त्याग देते हैं।

जैविक खेती के प्रचार प्रसार हेतु सरकार को चाहिए की वे जैविक खेती करने वालों को प्रमाणीकृत

खाद सरकारी संस्थानों से सब्सिडी पर उपलब्ध करवाए तथा चार साल के लिए आमदनी की गारंटी का बीमा की व्यवस्था करें जो प्रारम्भिक सालों में होने वाले घाटे की क्षतिपूर्ति करें। सरकार को पशुपालन को भी बढ़ावा देना चाहिए जिससे किसान जैविक खाद के लिए पूरी तरह बाजार पर आश्रित न रहे।

मेरा यह मानना है कि कृषि विश्वविद्यालय एवं इसके तीनों स्तम्भ यानि शोध, शिक्षा एवं प्रसार के माध्यम से जैविक खेती के क्षेत्र में अभूतपूर्व कार्यों को मूर्तरूप दिया जा सकता है जैसे कि जैविक खेती हेतु प्रमुख जैविक खाद निर्माण विधियों पर विद्यार्थियों, किसानों एवं अन्य हितधारकों को प्रशिक्षित करना, वैज्ञानिकों की विशेष बैठकें आयोजित करना, किसान से किसान नेटवर्क और सूचनाओं के प्रसार के लिये आदान–प्रदान को बढ़ावा देना। जैविक खेती अपनाने वाले किसानों की सफलता की कहानियों को त्वरित एवं वृहद स्तर पर विभिन्न प्रसार माध्यमों द्वारा प्रचारित करना आदि।

जैविक कृषि को बदलते परिप्रेक्ष्य में किसानों द्वारा अपनाये जाने के मार्ग में अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। हरित क्रांति के बाद से ही रसायनिक उर्वकों, खादों, कीटनाशकों को प्रयोग में लाना किसानों के बीच बहुत आम बात हो गयी है। साथ ही साथ जैविक कृषि के परिणाम मुनाफा देने के संदर्भ में किसानों को आकर्षित नहीं कर पा रहे है। अतः कृषि विश्वविद्यालयों की भूमिका अनुसंधान के क्षेत्र में बहुत अधिक बढ़ जाती है। ऐसी परिस्थितियों में अनुसंधान वैज्ञानिकों एवं किसानों की नेटवर्किंग द्वारा इस चुनौती को कृषि विश्वविद्यालय द्वारा प्रमुखता से लेना नितांत आवश्यक है। जैविक खेती उत्पादन में अनुसंधान प्रक्रियाओं में बढ़ी हुई फंडिंग द्वारा इस क्षेत्र को विकसित करना बहुत आवश्यक है। कृषि विश्वविद्यालयों को जैविक खेती में नेतृत्व और सामाजिक नेटवर्किंग करने हेतु अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास करने की आवश्यकता है। कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विद्यार्थियों को जैविक खेती के क्षेत्र में कीट संरक्षण, फूलों की खेती, वर्मी खाद आदि ऐसे कई अन्य विषयों की श्रृंखला का अध्यापन कॉलेज परिसर में जैविक खेतों, अनुसंधान कार्यक्रमों, प्रमाण–पत्र कार्यक्रमों और स्नातक तथा दूरस्थ शिक्षा के हाईब्रिड माध्यम से कराया जा सकता है। इसी के साथ स्टूडेंट रेडी प्रोग्राम, इन्टर्नशिप कार्यक्रमों, सर्टिफिकेट प्रोग्राम एवं एग्री क्लिनिक और एग्री बिजनेस पाठ्यक्रमों द्वारा भी इसको दिया जा सकता है। स्कूलों से ही विद्यार्थियों को राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 2020 के तहत जैविक खेती को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाये। कृषि विश्वविद्यालयों के जैविक प्रयोगशालाओं, फील्ड एवं वैज्ञानिकों से इन विद्यार्थियों को जोड़ा जाये।

हमारे सामने बड़ी चुनौती को देखते हुए, सतत खाद्य सुरक्षा के लिए विभिन्न प्रकार की कृषि प्रणालियों की क्षमताओं का आंकलन करना महत्वपूर्ण है । सभी के लिए और पर्याप्त मात्रा में भोजन उपलब्ध कराना पर्याप्त नहीं है बल्कि सुरक्षित और स्वस्थ भोजन प्रदान करना भी अनिवार्य है। इसलिए जैविक कृषि को एकमात्र समाधान माना जाता है। यह मिट्टी, पारिस्थितिकी तंत्र और लोगों के स्वास्थ्य को बनाए रखता है। वैश्विक चिंता है कि कृषि में रसायनों का उपयोग बढ़ रहा है और यह रातों रात बदलने वाला भी नहीं है। खाद्य सुरक्षा के स्थान पर हमें सुरक्षित खाद्य सुरक्षा की आवश्यकता है। अतः समस्त देशों को जैविक खेती को प्रोत्साहित करने वाली नीतियां विकसित करने की आवश्यकता है।

कोरोना को फैलने से रोकें

सावधानी रखें ! ध्यान रखें !

टीकाकरण कराएं

मास्क पहनें

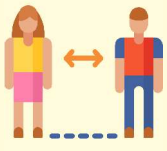

सामाजिक दूरी बना कर रखें

हाथों को साबुन से बार-बार धोएं

जैविक खाद बनाने की विधियाँ

डॉ. बी. एल. कुम्हार[1], डॉ. आर.एन. शर्मा[2] एवं डॉ. एम.एल. जाखड[3]

मिट्टी में सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या बढाने के लिए जैविक खाद का प्रयोग किया जाना आवश्यक है। जिससे फसल के लिए मित्र जीवाणुओं की संख्या, हवा का संचार, पानी को पर्याप्त मात्रा में सोखने की क्षमता में वृद्धि हो सके। भारत में प्राचीनकाल से गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद व जैविक खाद का प्रयोग विभिन्न फसलों की उत्पादकता बढाने के लिए किया जाता रहा है। इस समय ऐसी कृषि विधियों की आवश्यकता है जिससे अधिक से अधिक पैदावर मिले तथा मिट्टी की गुणवत्ता भी बनी रहे। जिन क्षेत्रों में रासायनिक खादों का ज्यादा प्रयोग हो रहा है वहां इनका प्रयोग कम करके जैविक खादों का प्रयोग करना चाहिए।ऐसी स्थिति में पौधों को पोषक तत्व देने के लिए जैविक खादों, हरी खाद व फसल चक्र प्रक्रिया अपनाना आवश्यक हो गया है। थोडी सी मेहनत व तकनीक का प्रयोग करने से जैविक खाद तैयार की जा सकती है जिसमें पोषक तत्व अधिक होंगे और उसे खेत में डालने से किसी प्रकार की हानि नहीं होगी और फसलों की पैदावार भी बढेगी। खेती में पुनः टिकाऊपन लाने और इसे लाभकारी तथा व्यावसायिक स्तर पर लाने के लिए रासायनिक उर्वरकों की जगह जैविक खादों को प्राथमिकता देना अनिवार्य हो गया है।

1. गोबर की खाद

गोबर की खाद बनाने के लिए पौधों के अवशेष, गोबर, जानवरों का बचा हुआ चारा आदि सभी वस्तुओं का प्रयोग करना चाहिए। गोबर की खाद बनाने के लिए 10 फुट लम्बा, 4 फुट चौडा व 3 फुट गहरा गड्ढा बनाना चाहिए। सारे जैविक पदार्थों को अच्छी तरह से मिलाकर गड्ढे को भरना चाहिए तथा उपयुक्त पानी डाल देना चाहिए। गड्ढे में जैविक पदार्थों को 30 दिन के बाद अच्छी तरह से पलटना चाहिए और उचित मात्रा में नमीं रखनी चाहिए। यदि नमी कम है तो पलटते समय पानी डाला जा सकता है। पलटने की क्रिया से जैविक पदार्थ जल्दी सडते हैं और खाद में पोषक तत्वों की मात्रा बढती है। इस तरह से यह खाद 3 महीने में बन कर तैयार हो जाती है।

खेत में खाद डालकर शीघ्र ही मिट्टी में मिला देना चाहिए। ढेरियों को खेत में काफी समय छोडने से नत्रजन की हानि होती है जिससे खाद की गुणवत्ता में कमी आती है। गोबर की खाद में नत्रजन की मात्रा कम होती है और उसकी गुणवत्ता बढाने के लिए अनुसंधान कार्यों से कुछ विधियां विकसित की गई हैं। जैविक खाद में फास्फोरस की मात्रा बढाने के लिए रॉक फास्फेट का प्रयोग किया जा सकता है। 100 किलोग्राम गोबर में 2 किलोग्राम रॉक फास्फेट आरम्भ में अच्छी तरह से मिलाकर सडने दिया जाता है। तीन महीने में इस खाद में फास्फोरस की मात्रा लगभग 3 प्रतिशत हो जाती है। इस विधि से फास्फोरस की घुलनशीलता बढती है। अगर खाद बनाते समय केंचुओं का प्रयोग कर लिया जाए तो यह जल्दी बनकर तैयार हो जाती है और इस खाद और इस खाद में नत्रजन की मात्रा अधिक होती है। खाद बनाते समय पी.एस.बी. का एक पैकेट व एजोटोबैक्टर जीवाणु खाद का एक पैकेट खाद में डाल दिया जाए तो फास्फोरस को घुलनशील बनाने वाले जीवाणु व एजोटोबैक्टर जीवाणु पनपते हैं और खाद में नत्रजन व फास्फोरस की मात्रा में वृद्धि होती है। इस जीवाणुयुक्त खाद के प्रयोग से पौधों का अच्छा विकास होता है। इस तरह वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करके अच्छी गुणवत्ता वाली जैविक खाद बनाई जा सकती है जिसमें लाभकारी तत्व उपस्थित होते हैं। इसके प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति बढाई जा सकती है। जैविक खाद किसानों के यहां उपलब्ध संसाधनों के प्रयोग से आसानी से बनाई जा सकती है। रासायनिक खादों का प्रयोग कम करके और जैविक खाद का अधिक से अधिक प्रयोग करके हम अपने संसाधनों का सही उपयोग कर कृषि उपज में बढोत्तरी कर सकते हैं और जमीन को खराब हाने से बचाया जा सकता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में लोग प्रायः फसल अवशेषों और पशुओं के मूलमूत्र को नष्ट होने देते हैं। गोबर व अन्य अवशेषों का सडकों या गलियों में ढेर लगा दिया जाता है या गोबर के उपले बनाकर जला दिये जाते हैं। इस प्रकार यह अवशेष सडते–गलते नहीं हैं और

1 सहायक आचार्य (पादप प्रजनन एवं आनुवांशिकी), अनुसंधान निदेशालय, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर
2 आचार्य (प्रसार शिक्षा) एवं उपनिदेशक अनुसंधान एवं विपणन, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर
3 निदेशक अनुसंधान, अनुसंधान निदेशालय, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

वातावरण प्रदूषित होता है। इन अवशेषों को खेत में डालने से दीमक, खरपतवार व पौध रोगों को बढावा मिलता है।

2. नादेप कम्पोस्ट

यह विधि महाराष्ट्र के नारायण देवराव पंढरी पांडे नामक किसान द्वारा विकसित की गई है अतः इसे नादेप कम्पोस्ट विधि के नाम से जाना जाता है। इस विधि में उसने 75 कि.ग्रा. वनस्पति अवशेष, 20 कि.ग्रा. हरी घास व 5 कि.ग्रा. गोबर 200 लीटर पानी में डाल कर अच्छे से मिलाते हैं। इस विधि में ईंट व सीमेंट की मदद से 12 फीट लम्बा, 5 फीट चौड एवं 3 फीट गहरा गड्ढा बनाये जाते हैं। इन टैंकों में तल से एक फुट ऊॅचाई के बाद दीवार की प्रत्येक ईंट के बाद में करीब आधा ईंट का स्थान छोडकर ईंटें इस प्रकार चुनी जाती है कि ताकि निर्मित टैंक में वायु प्रवेश के लिए पर्याप्त स्थान बना रहे। टैंक बनाने के बाद टैंक को अंदर से पतले गोबर से लीप दिया जाता है इसके बाद इसमें 4–6 इंच मोटी जैविक पदार्थों की एक तह बनायी जाती है उसके बाद 4–6 इंच मोटी तह हरे वानस्पतिक पदार्थों से भरकर बनाई जाती है उसके बाद लगभग 4 कि.ग्रा. गोबर 100 लीटर पानी में घोलकर इस तह के ऊपर समान रूप से छिडक दिया जाता है अंत में करीब 60 कि.ग्रा. मिट्टी से भरे हुए पदार्थों के ऊपर समान रूप से बिखेर दी जाती है। इसी प्रकार प्रत्येक टैंक में 10–12 तह बनाई जाती है। टैंक अपनी कुल ऊॅचाई से लगभग डेढ फुट ऊॅचाई तक ढक दिया जाता है तथा ऊपरी सतह को 3 इंच मोटाई की मिट्टी और गोबर घोल परत से लीप दिया जाता है। लगभग 15 दिन से एक महीने के बाद भरे हुए पदार्थ लगभग 02 फुट नीचे टैंक में धॅस जाते हैं। इस प्रकार टैंक में बने स्थान का पुनः इसी प्रकार की तह बनाकर मिट्टी व गोबर के लेप से बंद कर दिया जाता है। आवश्यकता पडने पर नमी बनाये रखने हेतु 6 से 15 दिन के अंतर से पानी का छिडकाव किया जाता है। लगभग 3 महीने में कम्पोस्ट खाद बनकर तैयार हो जाती है।

नादेप कम्पोस्टींग

3. वर्मी कम्पोस्ट खाद

फसल में पोषक तत्वों का संतुलन बनाने में वर्मी कम्पोस्ट खाद की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। वर्मी कम्पोस्ट खाद को विशेष प्रकार के केंचुओं से बनाया जाता है। इन केंचुओं के माध्यम से अनुपयोगी जैविक वानस्पतिक जीवांशों को अल्प अवधि में अच्छे जैविक खाद का निर्माण करके, इसके उपयोग से मृदा के स्वास्थ्य में आशातीत सुधार होता है एवं मृदा की उर्वरा शक्ति बढाती है जिससे फसल उत्पादन में स्थिरता के साथ गुणात्मक सुधार होता है। वर्मी कम्पोस्ट में नाईट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार सूक्ष्म पोषक तत्व भी पाये जाते हैं। वर्मी कम्पोस्ट पोषक पदार्थों से भरपूर एक उत्तम जैव उर्वरक है। केंचुआ खाद तैयार करने के लिए छायादार स्थान में 10 फीट लम्बा, 3 फीट चौडा, 12 इंच गहरा पक्का ईंट सीमेंट का ढॉचा बनाएं। जमीन से 12 इंच ऊंचे चबूतरे पर यह निर्माण करें। इस ढांचे में आधी या पूरी पची (पकी) गोबर कचरे की खाद बिछा दें। इसमें 100 केंचुए डालें। इसके ऊपर जूट के बोरे डालकर प्रतिदिन सुबह–शाम पानी डालते रहें। इसमें 60 प्रतिशत से ज्यादा नमी ना रहे। दो माह बाद यह खाद बन जाएगी, 15 से 20 क्विंटल प्रति एकड की दर से इस खाद का उपयोग करें। वर्मी कम्पोस्ट के लिए केंचुए की मुख्य किस्में– आइसीनिया फोटिडा, यूड्रिलस यूजीनिया और पेरियोनेक्स एक्जकेटस है। यह मिट्टी की उर्वरता एवं उत्पादकता को लम्बे समय तक बनाए रखती है। मृदा की उर्वरा शक्ति बढती है जिससे फसल उत्पादन में स्थिरता के साथ गुणात्मक सुधार होता है। यह नाईट्रोजन के साथ फास्फोरस एवं पोटाश तथा अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों को भी सक्रिय करता है। जैविक खाद होने के कारण वर्मी कम्पोस्ट में लाभदायक सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रियाशीलता अधिक होती है जो भूमि में रहने वाले सूक्ष्म जीवों के लिए लाभदायक एवं उत्प्रेरक का कार्य करते हैं। वर्मी कम्पोस्ट में उपस्थित पौध पोषक तत्व पौधों को आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। मृदा में जीवांश पदार्थ (ह्यूमस) की वृद्धि होती है, जिससे मृदा संरचना, वायु

संचार तथा जल धारण क्षमता बढने के साथ–साथ भूमि उर्वराशक्ति में वृद्धि होती है। अपशिष्ट पदार्थों या जैव उपघटित कूडे–कचरे का पुनः चक्रण आसानी से हो जाता है। वर्मी कम्पोस्ट में बदबू नहीं होती है और मक्खी एवं मच्छर नहीं बढते है और वातावरण प्रदूषित नहीं होता है। तापमान नियंत्रित रहने से जीवाणु क्रियाशील तथा सक्रिय रहते हैं। वर्मी कम्पोस्ट डेढ से दो माह के अंदर तैयार हो जाता है। इसमें 2.5 से 3% नाइट्रोजन, 1.5 से 2% सल्फर 1.5 से 2% पोटाश पाया जाता है। वर्मीकम्पोस्ट में गोबर की खाद की अपेक्षा 5 गुना नाइट्रोजन, 8 गुना फास्फोरस, 11 गुना पोटाश और 3 गुना मैग्नीशियम तथा अनेक सूक्ष्म तत्व संतुलित मात्रा में पाये जाते हैं। वर्मीकम्पोस्ट के प्रयोग से भूमि की भौतिक गुणवत्ता में सुधार होता है। केंचुए भूमि में उपलब्ध फसल अवशेषों को भूमि के अंदर तक ले जाते हैं और सुरंग में इन अवशेषों को खाकर खाद के रूप में परिवर्तित कर देते हैं तथा अपनी विष्ठा, भू स्तर पर छोड देते हैं। जिससे मृदा की वायु संचरण क्षमता बढ जाती है। विशेषज्ञों के अनुसार केंचुए 2 से 250 टन मिट्टी प्रतिवर्ष उलट पलट कर देते हैं जिसके फलस्वरूप भूमि की 1 से 5 मिलिमीटर सतह प्रतिवर्ष बढ जाती है।

वर्मी कम्पोस्टींग

4. हरी खाद

हरी खाद (Green manure) उस सहायक फसल को कहते हैं जिसकी खेती मुख्यतः भूमि में पोषक तत्वों को बढाने तथा उसमें जैविक पदार्थों की पूर्ति करने के उद्देश्य से की जाती है। प्रायः इस तरह की फसल को इसके हरी स्थिति में ही हल चलाकर मिट्टी में मिला दिया जाता है। हरी खाद से भूमि की उपजाऊ शक्ति बढती है और भूमि की रक्षा होती है। मृदा के लगातार दोहन से उसमें उपस्थित पौधे की बढवार के लिये आवश्यक तत्व नष्ट होते जा रहे हैं। इनकी क्षतिपूर्ति हेतु व मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बनाये रखने के लिये हरी खाद एक उत्तम विकल्प है। बिना गले–सडे हरे पौधे (दलहनी एवं अन्य फसलों अथवा उनके भाग) को जब मृदा की नत्रजन या जीवांश की मात्रा बढाने के लिये खेत में दबाया जाता है तो इस क्रिया को हरी खाद देना कहते हैं। हरी खाद बनाने में दलहनी पौधे का उत्पादन शामिल होता है। उनका उपयोग उनके सहजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकरण क्षमता के कारण किया जाता है। कुछ क्षेत्रों में गैर दलहनी पौधों का भी उपयोग किया जाता है। आमतौर पर मैदानी इलाके में सनई, ढैंचा आदि को हरी खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। पूरी फसल को मिट्टी पलट हल से जोत दिया जाता है। इससे फसल मिट्टी में दब जाती है और सडने के बाद खाद बन जाती है।

ढैंचे की हरी खाद

5. मटका खाद

मटका खाद बनाने की विधि

गौ मूत्र 10 लीटर, गोबर 10 किलो, गुड 500 ग्राम, बेसन 500 ग्राम–सभी को मिलाकर मटके में भरकर 10 दिन

सडाएं फिर 200 लीटर पानी में घोलकर गीली जमीन पर कतारों के बीच छिडक दें। 15 दिन बाद पुनः इस का छिडकाव करें।

6. बायोगैस स्लरी

बायोगैस संयंत्र में गोबर गैस की पाचन क्रिया के बाद 25 प्रतिशत ठोस पदार्थ रूपान्तरण गैस के रूप मेंहोता है और 75 प्रतिशत ठोस पदार्थ का रूपान्तरण खाद के रूप में होता है। जिसे बायोगैस स्लरी कहा जाता है। ये खेती के लिये अति उत्तम खाद होता है। इसमें 1.5 से 2ः नत्रजन, 1ः फास्फोरस एवं बायोगैस संयंत्र में गोबर गैस की पाचन क्रिया के बाद 20 प्रतिशत नाइट्रोजन अमोनियम नाइट्रेट के रूप में होती है। अतः यदि इसका तुरंत उपयोग खेत में सिंचाई नाली के माध्यम से किया जाये तो इसका लाभ रासायनिक खाद की तरह फसल पर तुरंत होता है और उत्पादन में 10–20 प्रतिशत बढ़त हो जाती है। स्लरी के खाद में नत्रजन, सल्फर एवं पोटाश के अतिरिक्त सूक्ष्म पोषण तत्व एवं ह्यूमस भी होता है जिससे मिट्टी की संरचना सुधरती है तथा जल धारण क्षमता बढती है। सूखी खाद असिंचित खेती में 5 टन एवं सिंचित खेती में 10 टन प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। गैस स्लरी सिंचित खेती में 3–4 टन प्रति हैक्टर देनी चाहिए। सूखी खाद का उपयोग अन्तिम जुताई के समय एवं ताजी स्लरी का उपयोग सिंचाई के दौरान करें। स्लरी के उपयोग से फसलों को तीन वर्ष तक पोषक तत्व धीरे–धीरे उपलब्ध होते रहते हैं।

बायो गैस स्लरी

अखबार में प्रकाशित विश्वविद्यालय समाचार

कृषि विशेषज्ञों ने बताए ट्रैक्टर का रखरखाव

बीकानेर | स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विवि ने सोशल रिस्पांसबिलि... के तहत गोद लिए कावनी गांव में किसानों को ट्रैक्टर के रखरखाव ... तरीके बताए। इसमें कई जानी-मानी ट्रैक्टर एजेंसियों के जानकार भी य... लेकर पहुंचे। बीकानेर में टिड्डी समस्या को देखते हुए टिड्डी नियंत्र... यंत्र का भी प्रदर्शन किया। करीब 400 ग्रामीणों ने प्रशिक्षण में हिस्... लिया। विवि के कुलपति प्रो.आर.पी.सिंह इंजीनियर विपिन लड्ढा, ड... एस.आर.यादव, डॉ.रंजीत सिंह, एक्पर्ट मानसिंह, ...

स्वादिष्ट व पौष्टिकता से भरपूर ... एसकेआरएयू बीकानेर में लगे पेड़ बने आकर्षण का केंद्र

खेतों से मंडियों तक बेर की बहार

...घटते पानी एवं जलवायु मफीद होने से राजस्थान में बेर की खेती बड़े पैमाने पर होने लगी है। कम लागत एवं नकदी फसल होने से बड़ी संख्या किसान बेर की खेती कर रहे हैं। हालांकि अच्छे भावों को कारण एप्पल बेर की खेती भी तेजी से राजस्थान के किसानों में लोकप्रिय हो रहा है। चौमूं के बेर की देशभर की मण्ड़ियों में बरसों से मांग रहती है।

...अतुल आचार्य@बीकानेर

रा...ज्य के शुष्क क्षेत्रों में बार-बार अकाल की स्थिति से निपटने में बेर की बागवानी मददगार बन रही है। ...बेर ऐसा फल है, जिसके पौधे एक बार ठीक ...से जड़ें जमा कर ठीक से बढ़वार ले लेवें, ...

पहली बरसात के बाद रोपाई

मई-जून की गर्मियों में गड्ढे खोद कर खाद आदि डाल कर तैयारी कर लेवें। पहली बरसात में मिट्टी जमने के बाद जुलाई में कलिकायन किए गए पौधे की इन गड्ढों में रोपाई करनी चाहिए। जड़ें जम कर ठीक से बढ़वार लेने ...

गुजरात के किसानों ने किया कृषि संग्रहालय का भ्रमण

पत्रिका न्यूज़ नेटवर्क
patrika.com

बीकानेर. आत्मा परियोजना के अंतर्गत गुजरात राज्य के बनासकांठा जिले से आए 45 कृषकों ने गुरुवार को कृषि विश्वविद्यालय के स्वामी विवेकानंद कृषि संग्रहालय का भ्रमण कर खेती में जल बचत, कृषि में सौर ऊर्जा के उपयोग, खजूर की खेती एवं उसके मूल्य संवर्धित उत्पाद, राजस्थान के पशुओं की प्रमुख नस्लें, समन्वित कृषि प्रणाली, कृषि तथा विश्वविद्यालय की ओर से विकसित विभिन्न फसलों की किस्मों की जानकारी प्राप्त की।

इस अवसर पर संग्रहालय प्रभारी इंजीनियर जितेंद्र गौड़ ने गोबर गैस संयंत्र फल सब्जियों के लिए घरेलू सोलर ड्रायर, सोलर इन्सेक्ट ट्रेपर, शेल्टर बेल्ट द्वारा फसल सुरक्षा, पवन टरबाइन जीवंत मॉडल प्रदर्शित कर इन के उपयोग की विस्तृत जानकारी दी। एटीक प्रभारी डॉ. सीमा त्यागी ने सोलर कुकर के उपयोग हेतु जीवंत प्रदर्शन ...

श्रीगंगानगर एआरएसः नरमा की नई किस्में आरएस 2818 व आरएस 2827 विकसित

नेशनल स्तर पर दो गैर बीटी कॉटन की नई किस्मों का गजट नोटिफिकेशन

कृष्ण चौहान
patrika.com

RS 2818

RS 2827

उत्पादन व गुणवत्ता में बेहतर

पहले यह किस्में हुई थी विकसित

इनका भी रहा विशेष सहयोग

जायद मूंग उत्पादन की वैज्ञानिक तकनीक

डॉ. रणवीर कुमार यादव[1], डॉ. रणजीत सिंह[2], डॉ. भँवर देवी सिंह नाथावत[3] एवं डॉ. शंकर लाल यादव[4]

मूंग राजस्थान में बोई जाने वाली महत्त्वपूर्ण दलहनी फसल है जो कि खरीफ एवं जायद ऋतु में बोई जाती हैं। मूंग के दानों में 24 प्रतिशत प्रोटीन, 60 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेटस तथा अल्प मात्रा में विटामिन–सी के साथ–साथ रेशे एवं लौह तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। मूंग में फलीया लगते समय एवं पकते समय सूखा मौसम और उच्च तापमान लाभदायक होता है। मूंग की जल्दी पकने वाली एवं उच्च तापमान को सहन करने वाली किस्मों के विकास के कारण जायद में मूंग की खेती लाभदायक हो रही है।

उन्नत किस्में :

के 851– यह किस्म सभी प्रकार की मृदाओ में उगाई जा सकती है। जहां सिंचाई की उचित व्यवस्था हो। इस किस्म के पौधे मध्यम ऊंचाई वाले, दानों का आकार मध्यम व चमकीले हरे होते है। ज्यादातर फलियां एक बार में पक जाती हैं। इसकी पैदावार 7.5–10 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

टाइप 44(पूसा बैसाखी)– यह किस्म सिंचित इलाकों में गर्मियों के मौसम में उगाई जाती है। जो 65 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार 6.25–8.75 प्रति हैक्टेयर है।

एम.एच.96–1 (मुस्कान)– यह किस्म की ग्रीष्म व खरीफ दोनों में उगाई जा सकती है। ग्रीष्म काल में फलियां एक साथ पकती है। अधिक पकने पर इनके दाने झड़ जाते है। इसकी पैदावार 10 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

एस.एम.एल–668 – इसके दाने मोटे, चमकीले व हरे होते है। फलियां एक साथ पकती है। यह किस्म 65–70 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। इसकी उपज 8–9 क्विंटल प्रति हैक्टर होती है।

आर.एम.जी. 344 – यह किस्म 62–72 दिन में पककर तैयार हो जाती है। यह खरीफ एवं जायद में बुआई के लिए उपयुक्त है। इसका दाने चमकदार एवं मोटे होते है और उपज 7–9 क्विंटल प्रति हेक्टर है।

भूमि का चुनाव एवं तैयारी – मूंग की खेती के लिए बलुई दोमट एवं दोमट मिट्टी सर्वोत्तम होती है। खेत में जल निकास का उचित प्रबन्धन होना चाहिए। क्षारीय एवं अम्लीय भूमि मूंग की खेती के लिए उपयुक्त नहीं है। जायद की फसल के लिये पलेवा देकर खेत की तैयारी करनी चाहिये। खेत तैयार करने के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके, एक जुताई हैरो से करने के बाद कल्टीवेटर से जुताई कर पाटा लगा देते है, जिससे भूमि समतल हो जाती है। और भूमि में नमी संरक्षित रहे।

भूमि उपचार – मूंग में भूमि उपचार मुख्यतयाः दीमक नियंत्रण के लिए करते है, इसके लिए 24 किलोग्राम क्यूनॉलफॉस 1.5 प्रतिशत प्रति हैक्टेयर की दर से बुआई से पहले मृदा मिलाकर जुताई कर देते है।

बीज उपचार – बुआई के पहले बीज को कार्बोन्डाजिम 2 ग्राम या थाईरम 3 ग्राम या 4–5 ग्राम ट्राइकोडर्मा प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें। मूंग में बीजों को राइजोबियम एवं पी.एस.बी. जीवाणु कल्चर द्वारा उपचारित करते है। राइजोबियम के कारण पौधे वातावरणीय नत्रजन का स्थिरीकरण करते है। पी.एस.बी. उपचार से फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ती है। कल्चर से उपचारित करने हेतु सर्वप्रथम 600 मिली. पानी में 40–60 ग्राम गुड़ उबालते है। घोल के ठण्डा होने पर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से तीन पैकेट डालकर बीजों में अच्छी तरह से मिलाये। उपचार के बाद यह ध्यान रखना चाहिए कि बीजों को छाया में सुखाया जाता है।

खाद एवं उर्वरक : मूंग एक दलहनी फसल है अतः इसको कम नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। मूंग के लिए 20 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40 किलोग्राम फॉस्फोरस, 20–30 किलोग्राम पोटाश एवं 20 किलोग्राम गंधक प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें । सभी उर्वरकों को बुआई के समय डालना चाहिये । दो से तीन वर्ष के अन्तराल में 5 से 10 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद प्रति हैक्टर देनी चाहिए।

1 सहायक आचार्य (शस्य विज्ञान), 2. सह आचार्य (मृदा विज्ञान), 3. सहायक आचार्य (पौध व्याधि विज्ञान) कृषि अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर
4. सहायक आचार्य (शस्य विज्ञान) कृषि अनुसंधान उप केन्द्र खानपुर झालावाड

बीज एवं बुआई – जायद मूंग की बीज दर सामान्यतः 20–25 किलोग्राम प्रति हैक्टर की दर से रखते है। कतार से कतार की दूरी 30 सेमी तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी रखते है एवं बीज को 3–5 सेमी गहराई पर बोना चाहिये । जायद मूंग की बुवाई 15 फरवरी से 15 मार्च के मध्य करना उपयुक्त रहता है परंतु इसके बाद बुआई करने पर गर्म हवा तथा वर्षा के कारण फलियों को नुकसान होता हैं।

खरपतवार नियंत्रण

हाथ से निराई–गुड़ाई खरपतवार नियंत्रण का सबसे अच्छा तरीका है । पहली सिंचाई के बाद निराई–गुड़ाई करने से खरपतवार नष्ट होने के साथ–साथ भूमि मे वायु का भी अच्छा संचार होता है जो जड ग्रन्थियों में जीवाणुओं द्वारा वायु मण्डलीय नत्रजन स्थिरीकरण करने में सहायक होता है। रासायनिक विधि द्वारा नियंत्रण हेतु इमाजेथापायर + पेण्डीमेथालीन (2 प्रतिशत + 30 प्रतिशत) नामक दवा की 2400 मिली 600 ली. पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये हल्की मृदाओ मे प्रयोग करना चहिये। भारी मृदाओ मे पैन्डीमैथालीन 30 ई०सी० 3.3 लीटर को 800–1000 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के दो तीन दिन के अन्दर (अंकुरण पूर्व) छिड़काव करें।

रोग एवं कीट नियंत्रण

दीमक : दीमक फसल के पौधों की जड़ों को खाकर नुकसान पहुंचाता है। इसके नियंत्रण के लिए बुआई से पहले अन्तिम जुताई में क्यूनॉलफॉस 1.5 प्रतिशत पाउडर 24 किलोग्राम मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से मृदा में मिलाते है या खड़ी फसल में क्लोरोपाइरीफोस 4 लीटर भारी मृदाओं में तथा 2.4 लीटर हल्की मृदाओं में प्रति हैक्टर की दर से सिंचाई के साथ प्रयोग करें।

मोयला, सफेद मक्खी एवं हरा तेला :ये तीनों कीट मूंग की फसल में रस का चूषण कर अत्यधिक नुकसान पहुंचाते है। इनके नियंत्रण के लिए डाईमिथोएट 30 ईसी 1.2 लीटर प्रति प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

फली छेदक : यह कीट फलिया बनते समय अत्यधिक नुकसान करता है। इसके लिए नियंत्रण के लिए क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 1.2 लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

जीवाणु रोग : इस बीमारी के लक्षण पत्तियों, तने एवं फलियों पर गहरे भूरे धब्बे के रूप में दिखाई देते है। इस रोग के नियंत्रण हेतु स्ट्रेप्टोसाइक्लीन 50 ग्राम या एग्रिमाइसीन 200 ग्राम को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

पीतशिरा मोजेक : इस रोग के लक्षण एक महीने की फसल होने पर फैले हुए पीले धब्बों के रूप में दिखाई देते है। इसके नियंत्रण के लिए डायमिथोएट 30 ई.सी. 1.2 ली. प्रति है. या मिथाइल डिमेटोन 1 मिली. प्रति ली. पानी के हिसाब से सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए छिड़काव करना चाहिए क्योंकि यह रोग इस मक्खी के द्वारा फैलता है।

फसल कटाई : मूंग की फलिया जब काली पड़ने लगे तथा पौधा सूखने लगते तब कटाई कर लेनी चाहिए, अधिक सूखने से फलियों में फटने की समस्या होने लगती है। वैसे वर्तमान में बोई जाने वाली किस्मों की फलियां एक साथ पकती है।

उपज : मूंग की उन्नत तकनीक अपनाकर जायद में 10–12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक उत्पादन लिया जा सकता है।

यूनिवर्सिटी सोशल रिस्पांसिबिलिटी के तहत गोद लिए गांव कावनी की कुछ झलकियां

खाद्य पदार्थों के शुष्कन के लिए सौर शुष्कक

इंजी. विजयराज सिंह[1], नेहा शर्मा[2], डॉ. सीमा त्यागी[3]

खाद्य पदार्थों को लम्बे समय तक संरक्षित रखने के लिए उसमें से नमी को निकालना आवश्यक होता है अन्यथा वह कुछ समय बाद खराब हो जाते हैं। खाद्य पदार्थों में सूक्ष्म जैविक सड़न और रासानियक परिवर्तन में जल सक्रियता की बहुत अहम भूमिका है। अधिक नमी रहने से सूक्ष्म जीवाणु पनपते हैं। नमी स्तर घटाने से जीवाण्विक कोशिकाओं में भी जल समाप्त हो जाता है जिससे जीवाण्विक कोशिकाओं की बढवार भी रूक जाती है।

शुष्कन से पूर्व फल सब्जियों की छंटाई, धुलाई, छिलाई, काटना, फाक निकालना आदि क्रियाएं करनी पड़ती है। कुछ फल व सब्जियों में शुष्कन से पूर्व किण्वन संबंधी (एंजाइमेटिक) सक्रियता को नष्ट करने के लिए ब्लीचिंग की जाती है। शुष्कन से पूर्व पदार्थ के रंग को सुरक्षित रखने के लिए सल्फरिंग करते हैं। अधिकांश फलों को सल्फरडाइऑक्साइड से उपचारित किया जाता है क्योंकि ऑक्सीकरण निरोधी (एंटीऑक्सीडेंट) है और इसमें परिरक्षण के गुण हैं। सल्फरिंग करने से पदार्थ में मौजूद पोशक तत्व जैसे कैरोटीन और एस्कॉर्बिक अम्ल के नष्ट होने की संभावना कम हो जाती है। खाद्य पदार्थों की नमी को भण्डारण हेतु उपयुक्त नमी स्तर तक लाने के लिए प्रायः उसे धूप में सुखाया जाता है। पदार्थों को पतली परत में बिछाकर खुली धूप में सुखाना एक पारम्परिक विधि है, जिसमें उत्पाद को सुखाने की क्रिया मौसम पर ज्यादा निर्भर करती है तथा उत्पाद पर धूल, मिट्टी, बरसाती बौछार तथा पक्षियों द्वारा नुकसान की समस्या प्रायः रहती है। खाद्य पदार्थों को धूल, बरसाती बौछार, और पक्षियों से बचाने तथा कम समय में सुरक्षित सुखाने के लिए शुष्ककों का उपयोग करते हैं। वायु की गति एवं धात्विक सम्पर्क सतह का तापमान बढ़ाकर शुष्कन करने के लिए ईंधन की आवश्यकता होती है तथा विद्युत द्वारा चलित ट्रे शुष्कक में सुखा सकते हैं।

हमारे भारत देश में जहां वर्ष में लगभग 275 से 300 दिन तक अच्छी धूप खिलती है वहां सौर शुष्ककों का उपयोग कर बिना ईंधन और बिजली की खपत के द्वारा खाद्य पदार्थों को सुखाया जा सकता है। इस विधि में सूर्य की किरणों की गर्मी का उपयोग करते हुए कैबिनेट का तापमान बढ़ाकर, आर्द्रता तथा वायु प्रवाह को नियंत्रित कर खाद्य पदार्थ से नमी को निकाला जाता है। इस प्रक्रिया में खाद्य पदार्थ (फल, फूल, सब्जियां आदि) को साबुत, टुकड़े या फांके करके किसी ट्रे में फैला देते हैं। शुष्कन की क्रिया बहुत हद तक खाद्य पदार्थ में उपस्थित नमी, वायु के तापमान, वायुमण्डलीय आर्द्रता, वायु की गति, सतह द्वारा ताप का स्थानान्तरण आदि बातों पर निर्भर करती है।

सौर शुष्कक का प्रारूप एवं उपयोग

इस सौर शुष्कक की कार्य प्रणाली हरित गृह प्रभाव पर आधारित है जिसमें सौर विकिरण अवशोषण उपरान्त ऊष्मीय विकिरण में बदल जाते हैं तथा आवरण लगा होने के कारण विकिरण बाहर नहीं निकल पाते हैं। जिसके कारण कैबिनेट तापमान की बढोत्तरी होती है। इसका कैबिनेट पूरी तरह से 6 मि.मी. प्लाईवुड से बना है। इसके कैबिनेट की क्षमता एक बार में कम से कम 5 किलोग्राम खाद्य पदार्थ को सुखाने की है।

फल एवं सब्जियों के लिए सौर शुष्कक

इस सौर शुष्कक में आवरण के रूप में 200 माइक्रॉन की पारदर्शी यू. वी. स्टेब्लाइज्ड प्लास्टिक शीट का उपयोग किया गया है जिससे सौर विकिरण अन्दर

1.व्याख्याता, महाराजा अग्रसेन कृषि महाविद्यालय, सूरतगढ़, 2. छात्रा, महाराजा अग्रसेन कृषि महाविद्यालय, सूरतगढ़
3. एटिक प्रभारी, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

प्रवेश करती हैं और कैबिनेट के अन्दर का तापमान बढाती हैं परंतु अवशोषण के पश्चात बाहर नहीं निकल पाती है। इसके कैबिनेट को अन्दर से काले रंग में रंगा गया है। जंग से बचाने के लिए खाद्य उत्पादों को स्टेनलेस स्टील की जाली पर एक–एक कर फैलाया जाता है। सर्दियों के मौसम में धूप कम मिलने पर हवा से सुखाने के लिए 12वाट का सौर पैनल और एक छोटा डी. सी. पंखा भी इस्तेमाल किया गया है। तापमान को बढ़ाने के लिए इस पर एक फोल्डिंग परावर्तक (पंखानुमा एल्यूमिनियम फिल्म) भी लगाया गया है जिससे तापमान में 2 डिग्री सेल्सियस की अतिरिक्त बढोत्तरी आंकी गई है।

सौर शुष्कक में परावर्तक एवं सौर ऊर्जा

चालित पंखे का उपयोग

इसकी लागत लगभग 4000/– रूपये है तथा इसमें खाद्य पदार्थों को सुखाने में 2 से 4 दिन का समय लगता है। कम लागत वाला यह सौर शुष्कक घरेलू उपयोग के लिए अत्यंत लाभकारी है। इस शुष्कक की डिजाईन का परीक्षण महाराजा अग्रसेन महाविद्यालय सूरतगढ़ में किया गया है जिसका परिणाम तालिका 1 में दर्शाया गया है।

तापमान का तुलनात्मक अध्ययन

क्रमांक	माह	बाहर का तापमान (सेल्सियस)	अन्दर का तापमान (सेल्सियस)
1	नवंबर	25.9	56.8
2	दिसंबर	23.7	47.8
3	जनवरी	12.1	22.3

विभिन्न प्रकार के सौर शुष्कक

सरसों के प्रमुख कीट एवं रोग नियंत्रण

बिशनाराम[1] एवं अनुज[2]

यह राजस्थान प्रदेश में रबी की मुख्य फसल है। सरसों में अनेक प्रकार के कीट समय–समय पर आक्रमण करते हैं। इसलिए यह अति आवश्यक है कि इन कीटों की सही पहचान कर उचित रोकथाम की जाएं।

1. पेन्टेड बग

यह कीड़ा काले रंग का होता है, जिस पर लाल, पीले, व नारंगी के धब्बे होते है। इस कीडे के शिशु हल्के पीले व लाल रंग के होते हैं । दोनों प्रौढ़ व शिशु इन फसलों को दो बार नुकसान पहुंचाते हैं, पहली बार फसल उगने के तुरन्त बाद सितम्बर से अक्तूबर तक तथा दूसरी बार फसल की कटाई के समय फरवरी–मार्च में।

प्रौढ़ व शिशु पौंधों के विभिन्न भागों से रस चूसते हैं जिससे पत्तियों का रंग किनारों से सफेद हो जाता है, अतः इस कीडे को धौलिया भी कहते हैं। फसल पकने के समय भी कीडे के प्रौढ़ व शिशु फलियों से रस चूसकर दानों में तेल की मात्रा को कम कर देते हैं जिससे दानों के वज़न में भी कमी आ जाती है।

पेन्टेड बग

नियन्त्रण

फसल में सिंचाई कर देने से प्रौढ़, शिशु एवम् अण्डे नष्ट हो जाते हैं।

इसकी रोकथाम के लिए 25 किग्रा क्यूनॉलफॉस 1.5 प्रतिशत या मैलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण हैक्टेयर प्रातः या सायं भुरकें।

1200 मिली मैलाथियोन 50 EC को या 1200 मिली डाईमिथेएट 30 EC या 100 ग्राम थायोमिथोकजाम 25 WG को पानी में मिलाकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

यदि आवश्यक हो तो 15 दिन पश्चात् पुनः छिड़काव दोहरायें।

2. चेपा या माहू

यह कीड़ी हल्के हरे–पीले रंग का 1.0 से 1.5 मि.मि. लम्बा होता है। इसके प्रौढ़ एवं शिशु पत्तियों की निचली सतह और फूलों की टहनियों पर समूह में पाये जाते है। इसका प्रकोप दिसम्बर मास के अंतिम सप्ताह में (जब फसल पर फूल बनने शुरू होते हैं) होता है व मार्च तक रहता है।

प्रौढ़ व शिशु पौधों के विभिन्न भागों से रस चूसकर नुकसान पहुँचाते है। लगातार आक्रमण रहने पर पौधों के विभिन्न भाग चिपचिपे हो जाते हैं, जिन पर काला कवक लग जाता है। परिणामस्वरूप पौधों की भोजन बनाने की ताकत कम हो जाती है जिससे पैदावार में कमी हो जाती है। कीट ग्रस्तपौधे की वृद्धि रूक जाती है जिसके कारण कभी–कभी तो फलियां भी नहीं लगती और यदि लगती हैं तो उनमें दाने पिचके एवम् छोटे हो जाती है।

माहू

नियन्त्रण

समय पर बिजाई की गई फसल (10–25 अक्तूबर तक) पर इस कीट का प्रकोप कम होता है।

दिसम्बर के अन्तिम या जनवरी के प्रथम सप्ताह में जहां इस कीट के समूह दिखाई दें उन टहनियों के प्रभावित हिस्सों को कीट सहित तोड़कर नष्ट कर दें।

जब खेत में कीट का आक्रमण हो तो24 किग्रा क्यूनॉलफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण प्रति हैक्टेयर भुरके अथवा 100 ग्राम थायामेथोक्जाम 25 WG या 1200 मिली डाईमिथोएट 30 EC या 1000 मिली मोनोक्रोटोफॉस पानी में मिलाकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

साग के लिए उगाई गई फसल पर 250 से 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को250 से 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

3. आरा मक्खी

इस कीडे की मक्खीका धड़ नारंगी, सिर व पैर काले तथा पंखों का रंग धुएं जैसा होता है। सुण्डियों का रंग गहरा हरा होता है जिनके ऊपरी भाग पर काले धब्बों की तीन कतारें होती है।पूर्ण विकसितसुण्डियों की लम्बाई 1.5 – 2.

1 कृषि स्नातकोत्तर, कीट विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
2 विद्यावाचस्पति छात्र, पादप रोग विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

0 सैं.मी. तक होती है।
इस कीड़े की सुण्डियां इन फसलों के उगते ही पत्तों को काट–काट कर खा जाती है। इस कीड़े का अधिक प्रकोप अक्तूबर–नवम्बर में होता है। अधिक आक्रमण के समय सुण्डियां तने की छाल तक भी खा जाती है।

आरा मक्खी

नियन्त्रण
गर्मियों में खेत की गहरी जोताई करें।
इसकी रोकथाम के लिए 25 किग्रा क्यूनॉलफॉस 1.5 प्रतिशत या मैलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण हैक्टेयर प्रातः या सायं भुरकें।
1200 मिली मैलाथियोन 50 EC को या 1200 मिली डाईमिथेएट 30 EC या 100 ग्राम थायोमिथोकजाम 25 WG को पानी में मिलाकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें। यदि आवश्यक हो तो 15 दिन पश्चात् पुनः छिड़काव दोहरायें।

4. सरसों का सफेद रोली (White rust) रोग

यह सरसों का अति भयंकर रोग है। यह बीज व भूमि जनित रोग है। इस रोग के कारण बुवाई के 30–40 दिनो के बाद पतियों की निचली सतह पर सफेद रंग के ऊभरे हुए फफोले दिखाई देते है। फफोलो की ऊपरी सतह पर पतियों पर पीले रंग के धबे दिखाई देते है। उग्र अवस्था में सफेद रंग के ऊभरे हुए फफोले पतियों की दोनो सतह पर फैल जाते है। फफोलो के फट जाने पर

सफेद रोली (White rust) रोग

सफेद चूर्ण पतियों पर फैल जाता है। पीले रंग के धबे आपसमे मिलकर पतियों को पूरी तरह से ढक लेते है। पुष्पीय भाग व फलियाँ पूरी तरह से विकृत हो जाती है। जिनमे बीज नहीं बनते है।

नियंत्रण
सरसों की बुवाई अक्टुबर के पहले पखवाई में करे।
रोग के लक्षण दिखाई देते ही 2 ग्राम मैन्कोजेब या जाईनेब प्रतिलीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार यह छिड़काव 20 दिन के अंतराल पर दोहरायें द्य सफेद रोली के प्रभावी नियंत्रण हेतु लक्षण प्रकटहोने पर 2 ग्राम रिडोमिल एम जैड प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें अथवा 5 मिली ट्राईकोडर्मा डिफ्यूज्ड प्रति लीटर पानी से घोल बनाकर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार पुनः दोहरायें।

5. सरसों का स्केलेरोटीनिया तना सड़न रोग

यह रोग आज के समय में सबसे खतरनाक रोग है। यह भूमि व बीज जनित रोग है। तने पर लम्बे पनिहल धब्बे बनते है, जिन पर कवक जाल रूई की तरह फैला रहता है। रोग के कारण पौधे मुरझा कर सुखने लगते है तथा अन्त में तना फट जाता है। ग्रसित तने की सतह पर या मज्जा में भूरी–सफेद या काली–काली गोल आकृति की संरचनाएँ (स्केलेरोशिया) पायी जाती है।

तना सड़न रोग

नियंत्रण
प्रति हेक्टेयर बुवाई से पूर्व खेत में 10 किलोग्राम ट्राईकोडर्मा को 400 किलोग्राम गोबर की खाद में मिलाकरभूमि उपचार करे।
खड़ी फसल में बुवाई के 50–60 दिन बाद या रोग के लक्षण दिखाई देने पर कार्बेन्डाजिम 12% + मेन्कोजेब 63% के मिश्रण का 0.2% के घोल का छिड़कावकरे व आवश्यकता पड़ने पर 10 दिन के अन्तराल पर छिड़काव को दोहराए।
पौधे से पौधों व कतार से कतार की दूरी पर्याप्त।

6. सरसों का छाछया रोग

यह एक कवक जनित रोग है, जो शुरुआती अवस्था मे पौधे की पतियों व टहनियों पर मटमेले सफेद चूर्ण के रूप में दिखाई देती है। जो बाद में सम्पूर्ण पौधे पर फैल जाती है। जिसके कारण पतिया पीली होकर झड़ने लगती है।

छाछया रोग

नियंत्रण
इस रोग के नियंत्रण हेतु खड़ी फसल में 20–25 किलोयाम गंधक प्रति हेक्टेयर या 0.2% घुलनशील गंधक का छिड़काव करे या केराथियान–एल.सी का 0.1% घोल का छिड़काव करे। आवश्कतानुसार 15 दिनो के बाद छिड़काव को फ़िर से दोहराए।

मार्च माह के कृषि कार्य

डॉ. पी.एस. शेखावत, निदेशक अनुसंधान,
स्वा. के.रा.कृ.वि. बीकानेर

सस्य विज्ञान :

सिंचाई की दृष्टि से रबी की फसलों के लिये फरवरी का महीना अत्यन्त महत्वूपर्ण है क्योंकि इस समयः(1) गेहूँ एवं जौ की फसलों में फलॉवर प्रीमोडिया बनने की अवस्था रहती है।(2) अधिकांशत दलहन फसलों में घेघरे या फलियां बनने की अवस्था रहती है।(3) सरसों इत्यादि में फलियां विकसित होती है।इन अवस्थाओं में फसलों में पानी नहीं दिया जाता है तो उत्पादन में विपरीत प्रभाव पड़ता है। यही वह समय है कि जब रबी फसलों के पौधे वानस्पतिक वृद्धि की अवस्था से जनन वृद्धि की ओर अग्रसर होते है तथा इसी समय तापक्रम भी बढ़ जाता है अतः गेहूँ, जौ सामान्य समय से बोया गया है उसमें बालिया बनने की अवस्था यानि कि बुवाई के लगभग 70 दिन पर तथा दाना बनने की प्रारम्भिक अवस्था (बुवाई के 85 दिन बाद) पर सिंचाई करें। इस प्रकार कुल 2 सिंचाईयां करे। देर से बोई गयी गेहूँ की फसल में 40 एवं 55 दिन पर सिंचाई करें।

- जौ की फसल में फूल आने तथा दाने की दुधिया अवस्था पर पानी की कमी नहीं रहने पाये। सिंचाई व्यवस्था होने पर सिंचाई अवश्य करें।
- सरसों की फसल में तीसरी और अन्तिम सिंचाई करें।
- जई की फसल में प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई करें तथा 15–20 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हैक्टेयर देंवे। आवश्यकता पड़ने पर सिंचाई करें।

खरपतवार नियंत्रण :– बारानी एवं सिंचित फसलों में खरपतवार नियंत्रण करने के बावजूद जो खरपतवार पौधे खेत में रह जाते है उनमें फरवरी माह में बीज बन जाते है। बीजों को पककर झड़ने से पूर्व पौधे को काटकार या उखाड़कर नष्ट करना चाहिये। जिससे अगले वर्ष कम खरपतवार उग सके। रबी की प्रमुख खरपतवार है बथुआ, सेन्जी एवं प्याजी आदि।

- खेतों में खासकर सरसों, बैंगन एवं टमाटर आदि के खेतों के आस–पास ओरोबंकी (भम्पूड़ा) नामक खरपतवार जो इस क्षेत्र में पाई जाती है उसे बीज बनने से पूर्व उखाड़कर नष्ट करें तथा सरसों फसल में फसलचक्र अवश्य अपनावें एवम् वर्ष में एक बार खेत में गहरी जुताई अवश्य करें।

पौध व्याधि :

जीरा : झूलसा :– यह रोग अल्टरनेरिया बर्नसाई नामक फफूंद से फैलता है इस रोग के प्रकोप से पत्तियां व तने भूरे रंग के झुलसे हुये प्रतीत होते हैं। रोग का प्रकोप अधिक होने पर अधिकांश पत्तियां सूखकर मर जाती है। लक्षण दिखाई देते ही मैंकोजेब नामक फफूंदनाशी दवा का 2 ग्राम/लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें। इस छिड़काव को 15 दिन के अन्तराल पर दोहराये।

छाछिया रोग :– यह रोग फसल की पकाव वाली अवस्था में आता है। प्रकोप होने पर पत्तियों व तने तथ बीजों पर सफेद पाउडर दिखाई देता है। यदि रोग पुष्प आने की अवस्था में ही आ जाता है तो बीज नहीं बनते है। यदि यह रोग देर से आता है तो बीज बनते तो है परन्तु छोटे व अधपके रह जाते है। फलस्वरुप उपज कम होती है एवं गुणवत्ता पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही कैराथेन 1 मि.ली./लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करें या 25 किलो गन्धक चूर्ण प्रति हैक्टेयर का भूरकाव करे या 2.5 किलो घुलनशील गंधक हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।जीरे में उपरोक्त दोनो रोगों व कीट नियंत्रण हेतु पैकेज का दूसरा व तीसरा छिड़काव करें।दूसरा छिड़काव : बुवाई के 40–45 दिन बाद मैंकोजेब 0.2 प्रतिशत के साथ 300 मि.ली. डाइमिथोएट 30 ई.सी. या फास्फोमिडोन 250 मि.ली. को 60 लीटर पानी में घोल कर प्रति बीघा छिड़के। तीसरा छिड़काव : दूसरे छिड़काव के 10–15 दिन बाद मैंकोजेब+डाईमिथोएट+ केराथेन ई.सी. का छिड़काव करें।

चना : झुलसा रोग :– यह रोग एस्कोकाइटा रेबी नामक फफूंद द्वारा फैलता है। इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम जल शोषित धब्बों के रुप में दिखाई देते है जो धीरे–धीरे गोल भूरे किनारे तथा केन्द्र में पीलापन लिये धब्बों में परिवर्तित हो जाते है उग्र अवस्था में तनो व पत्तियों पर लम्बे धब्बों के रुप में दिखाई देते है। जिससे तने व डंठल सूख कर झुक जाते है। वर्षाती एवं आर्द्र वातावरण में यह रोग अधिक फैलता है।

नियंत्रण :– रोग के प्रारम्भिक लक्षण दिखाई पड़ने पर फसल पर क्लोरोथेनोनिल घुलनशील चूर्ण को एक ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करे।

सरसों एवं तारामीरा :–सफेद रोली :– रोग का कारक

एल्ब्यूगो केण्डीडाहै, इसे स्टेग हेड भी कहते है। इसके कारण पत्ती की निचली सतह पर सफेद अनियमित अन्दर के श्लेष्मि धब्बे बनते हैं जो शुरु से चिकने होते है बाद में ये फट जाते हैं। रोग की उग्र अवस्था में ये धब्बे तना, फूलों पर भी बनते हैं। फलस्वरुप फूलो का अग्र भाग फूल जाता है। इसे स्टेग हेड लक्षण कहते हैं। यह स्टेग हेड शुरु में हरा होता है तथा धीरे–धीरे भूरा होकर सूख जाता है उग्र अवस्था में ये फफोले तने तथा फलियों पर भी फैल जाते है।

रोकथाम :– लक्षण दिखाई देने पर 2 ग्राम मैकोजेब एक लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें तथा छिड़काव 15 दिन पर पुनः दोहराये।

तुलासिता रोग :– रोग जनक पेरेनोस्पोरा पैरासिटिकाकवक है। रोग के कारण पत्तियां पीली पड़कर सूखने लगती है पत्तियों की निचली सतह पर चूण्र देखने को मिलता है। उग्र अवस्था में पौधा सूख कर मरने लगता है।

रोकथाम :– लक्षण दिखाई देने पर 2 ग्राम मैंकोजेब एक लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करे।

गेहूँ रोली रोग – गेहूँ में मुख्यतः तीन तरह की (काली एवं तना रोली, पत्तियों की पीली स्ट्राइस रोली) रोली लगती है। इनमें से भूरी एवं पीली रोली लगने की संभावना रहती है। इन रोली के लक्षण दिखाई देने पर 2 ग्राम मैंकोजेब एक लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें तथा सुरक्षात्मक बचाव के रुप में गंधक चूर्ण 25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव 15 दिन के अन्तराल पर दो बार करे।

झूलसा एवं पत्ती वहन रोग :– रोग जनक कमशः अल्टरनेरिया ट्रीटीसिना व हेल्मीथोरथोरियम नामक कवक है लक्षण पत्तियों पर पीले भूरे अनियमित आकार के लम्बे धब्बों के रुप में दिखाई देते हैं। उग्र अवस्था में पूरी पत्तियां झुलसी हुई दिखाई देती हैं। रोकथाम हेतु लक्षण दिखाई देने पर 2 ग्राम मैंकोजेब एक लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

मैथी छाछिया रोग : रोग जनक ईरीसाइफीकवक है जो पत्तियों पर सफेद चूर्ण के रुप में दिखाई देता है। रोकथाम हेतु लक्षण दिखाई देते ही केराथेन 1–1.5 मि.ली./लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें।

तुलासिता रोग :– रोग जनक पेरेनोस्पोरा कवक है। इस रोग से पत्तियों को ऊपरी सतह पर पीले धब्बे दिखाई देते है तथा नीचे की सतह पर कवक की वृद्धि दिखाई देती है। उग्र अवस्था में रोग ग्रसित पत्तियां झड़ जाती है। नियंत्रण हेतु मैंकोजेब 2 ग्राम/लीटर पानी में मिलाकर करें।

बेर छाछिया रोग : रोग जनक ओईडियम नामक कवक है। इस रोग का प्रकोप सद्रग मौसम में दिखाई पड़ता है। इसमें बेर की टहनियां, पत्तियां एवं फल सफेद आवरण से ढक जाते हैं। प्रभावित पत्तियों एवं फलों की वृद्धि रुक जाती है। पत्तियां धीरे–धीरे पीली पड़कर गिर जाती है। उग्र अवस्था में यह टहनियों एवं फलों पर आक्रमण करता हैं जिसमें फल पक कर गिर जाते हैं। रोकथाम हेतु केराथेन 1–1.2 मि.ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से 15 दिन के अन्तराल पर 2–3 छिड़काव करें।

पत्ती धब्बा/झुलसा रोग :– रोग जनक अल्टरनेरियाकवक है। पत्तियों पर गहरे भूरे अनियमित आकार के धब्बे दिखाई पड़ते है। फलस्वरुप पत्तियां सूखकर गिरने लगती है। रोकथाम हेतु मैंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से लक्षण दिखाई पड़ते ही छिड़काव करें।

कीट नियंत्रण :–

गेहूँ, जौ : मकड़ी (माईट) और तेला का प्रकोप दिसम्बर मध्य से शुरु होता है। इसका प्रकोप दिखने पर मिथाईल डिमेटोन 25 ई.सी. या डाइमेथोएट (30 ई.सी.) 1.25 लीटर/हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें। इस छिड़काव से मोयला, माइट व तेला कीट की भी रोकथाम हो जायेगी।

चना : फलीछेदक लट : ये लटे हरे रंग की सवा इंच लम्बी व चौथाई इंच मोटी होती है जो बाद में भूरे रंग की हो जाती है। आरम्भ में ये चने की पत्तियों को खाती है और फली लगने पर उनमें छोटा छेद करके अन्दर का दाना खाकर खोखला कर देती है। इनकी रोकथाम के लिये फूल आने से पहले तथा फली लगने के बाद मेलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण या क्यूनालफास डेढ़ प्रतिशत चूर्ण या मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण या फेनवलरेट चूर्ण 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर भूरके। जहां पानी की सुविधा हो वहां फूल आने के समय क्यूनालफॉस (25 ई.सी.) मि.ली. या मोनोक्रोटोफास एक लीटर प्रति हैक्टेयर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें या स्पाइनोसिड 0.33 मि.मी./लीटर या इन्डोक्साकार्ब 200 मि. ली/ हैक्टेयर या इमामेक्टीन बेन्जोएट 0.5 ग्राम/ लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें ।

सरसों : मोयला का प्रकोप होने पर मिथाइल पेराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण 6 किलो/बीघा अथवा डाइमेथोएट 300 मि.ली. घोल बनाकर छिड़काव करें।

निदेशक की कलम से .....

सुभाष चन्द्र
निदेशक प्रसार शिक्षा

वैज्ञानिक तौर–तरीकों से बागवानी, सब्जी उत्पादन तथा अन्य कृषि कार्यकलापों से होने वाले विविध प्रकार के फायदों का महत्व प्रगतिशील एवं जागरूक कृषक भलीभांति समझते हैं। यही कारण है कि ये प्रायः अपने क्षेत्रों में ऐसी नई पहल करने में संकोच नहीं करते और कम से कम लागत में भरपूर उत्पादन लेकर अन्य कृषकों के लिए मिसाल और प्रेरणा स्रोत बन जाते हैं। देश की विशाल आबादी के लिए पोषक आहार जुटाने में बागवानी फसलों की अहम् भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता है। हमारे देश में आज भी यह चिन्ता का विषय है कि काफी बड़ी संख्या में ऐसे कृषक हैं, जिनका परंपरागत कृषि की ओर झुकाव निरंतर बना हुआ है। बागवानी की उपयोगिता को इस तथ्य से समझा जा सकता है कि खाद्यान्न की तुलना में फलदार फसलों तथा सब्जी उत्पादन से प्रति इकाई क्षेत्र कहीं अधिक उत्पादन ले पाना संभव होता है। यह एक निर्विवादित सत्य है कि खाद्यान्न फसलों की तुलना में सब्जियां कम समय में तैयार होने वाली नगदी फसलें हैं। वर्ष भर में तीन से चार सब्जियों की फसल अमूमन मिल जाती है। इस प्रकार सब्जियों से कहीं अधिक आय अर्जन संभव है।संभवतः इसी कारणवश अब तो कई खाद्यान्न फसलों के साथ किसान सब्जियों की फसल भी लगा रहे हैं और इस प्रकार उन्हें अतिरिक्त आमदनी मिल जाती है।देश में हर प्रकार के मौसम की उपलब्धता के कारण प्रायः सभी तरह की सब्जियों का उत्पादन विभिन्न क्षेत्रों में ले पाना संभव है। देश में फलों और सब्जियों की मौसमी किस्मों का उत्पादन चक्र वर्षभर अनवरत चलता रहता है।देश के कृषि संस्थानों द्वारा विकसित नई कृषि तकनीकियों और उन्नत किस्मों का किसानों द्वारा बडे पैमाने पर उपयोग करने से भी उत्पादन में निरंतर बढ़ोत्तरी देखने को मिल रही है। इन तकनीकियों में पॉलीटनल/ग्रीनहाउस में संरक्षित वातावरण में उगाई गई सब्जियों का विशेष तौर पर उल्लेख किया जा सकता है। कृषि तकनीकों की जानकारी हासिल करने का एक अन्य माध्यम है कृषि साहित्य। देश में तमाम सरकारी एवं निजी क्षेत्रों के संस्थानों की ओर से ऐसी कृषि पत्र–पत्रिकाओं, पुस्तकों आदि का प्रकाशन किया जाता है, जिनमें उन्नत कृषि तकनीकों पर महत्वपूर्ण जानकारियां दी जाती हैं। हमें विश्वास है कि किसान भाई कृषि साहित्य को पढ़कर वैज्ञानिक जानकारियों के अनुरूप खेती की नई तकनीकों को अपनाकर अपने परंपरागत तरीकों में कुछ बदलाव करने की दिशा में कदम अवश्य उठाएंगे।

स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय के अन्तर्गत संचालित कृषि विज्ञान केन्द्र

क्र. सं.	विवरण	दूरभाष संख्या व ई–मेल	वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष का नाम	मोबाईल नम्बर व ई–मेल
1.	कृषि विज्ञान केन्द्र, आबूसर–झून्झुनु	01592-233420 kvkabusar@gmail.com	डॉ. दयानन्द	9414580364 dr.dayanand04@gmail.com
2.	कृषि विज्ञान केन्द्र, बीछवाल–बीकानेर	0151-2250944 kvkbikaner@gmail. com	डॉ. दुर्गा सिंह	09424581584 dskhanpur@rediffmail.com
3.	कृषि विज्ञान केन्द्र, चॉदगोठी–चूरू	kvkchuru2@gmail.com	डॉ. आर.के. शिवरान	9414937819 rshivranars2007@gmail.com
4.	कृषि विज्ञान केन्द्र, जैसलमेर	02992-251359 kvkjaisalmer@gmail.com	डॉ. दीपक चतुर्वेदी	9414283678 dchatext@gmail.com
5.	कृषि विज्ञान केन्द्र, लूनकरनसर, बीकानेर	kvklunkaransar@gmail.com	डॉ. मदन लाल रैगर	9413123126 drmadanagro@gmail.com
6.	कृषि विज्ञान केन्द्र, पदमपुर–श्रीगंगानगर	kvksgnr@gmail.com	डॉ. भूपेन्द्र सिंह	9601912929
7.	कृषि विज्ञान केन्द्र,पोकरण–जैसलमेर	02994-222316 kvkpokaran@gmail.com	डॉ. बलबीर सिंह	9667410348 balbirdr@gmail.com

मार्गदर्शक : डॉ. सुभाष चन्द्र, निदेशक प्रसार शिक्षा, **सम्पादक** : डॉ. (श्रीमती) सीमा त्यागी, एटिक प्रभारी **सहयोग** : सतीश सोनी, सूचना एवं जनसम्पर्क अधिकारी, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर